कहानी सुनाने की प्रतियोगिता

कक्षा : LKG, UKG

1. वृंदावन में गोविंदजी मंदिर
2. बाल कृष्ण और फल बेचने वाला
3. चुपके से आम खाना

कक्षा : I, II, III

1. रहस्यमय बीज
2. दसिया बाउरी का नारियल
3. वृद्ध महिला और उसका आधा अनार

कक्षा : IV, V, VI

1. भक्त ने श्रीमद् भागवत का पाठ कर भगवान शिव को आकर्षित किया
2. राजा और उसकी चार पत्नियों
3. भगवान जिन्होंने खीर चुराई

कक्षा : VII, VIII, IX

1. भगवान जगन्नाथ का अवतार
2. ईश्वर जो करते हैं अच्छा करते हैं
3. शिकारी बना भक्त

कक्षा : X, XI, XII

1. मधु और भगवान अलरनाथ
2. भगवान जगन्नाथ का महाप्रसाद
3. सुदामा द्वारका में श्री कृष्ण के दर्शन करते हैं

कक्षा: LKG, UKG

कहानी : वृंदावन में गोविंदजी मंदिर

यह कहानी वृंदावन के गोविंद देव जी मंदिर की है।

रूप गोस्वामी एक महान वैष्णव आचार्य थे। एक दिन जब वे गोवर्धन परिक्रमा कर रहे थे तो उन्हें बहुत दुख हुआ। वे भगवान कृष्ण के दर्शन करना चाहते थे। वे यमुना नदी के पास एक पेड़ के नीचे बैठ गए और रोने लगे।

उसी समय एक सुंदर बालक प्रकट हुआ और उनसे पूछा, "प्रिय आचार्य, आप क्यों रो रहे हैं?"

रूप गोस्वामी ने लड़के की सुंदरता को देखा और उससे कहा कि वे भगवान कृष्ण के दर्शन करना चाहते हैं।

वह लड़का उन्हें एक छोटी सी पहाड़ी पर ले गया और उनसे कहा, "हर रोज एक गाय यहाँ आती है और दूध देती है। क्या आप यह नहीं देखना चाहते हैं कि वह गाय किसको दूध देती है?

यह कहने के बाद लड़का वहाँ से गायब हो गया। रूप गोस्वामी ने व्रजवासियों को बुलाया और ध्यान से उस स्थान कि खुदाई करने के लिए कहा। खुदाई करने पर वहाँ जमीन के नीचे भगवान गोविंद देव जी की एक सुंदर विग्रह मिला ।

हर कोई प्रभु के सुंदर विग्रह के दर्शन करने के लिए बहुत उत्साहित था। उन्होंने बहुत बड़ा समारोह किया, उस समारोह में भगवान को स्नान कराया और प्रेम और भक्ति के साथ उनकी पूजा की।

कहानी : बाल कृष्ण और फल बेचने वाला

एक दिन जब बाल कृष्ण अपने घर में खेल रहे थे तो उन्होंने देखा कि एक फल बेचने वाला आया हुआ है। कृष्ण ने तुरंत खेलना बंद कर दिया और फल खरीदने के लिए दरवाजे की ओर दौड़ पड़े। तभी उन्हें याद आया कि उनकी माँ यशोदा मैय्या हमेशा फल बेचने वाले को कुछ अनाज देती थीं और अनाज के बदले वह फल देता था। इसलिए कृष्ण ने भी, अनाज के एक बड़े बर्तन से मुट्ठी भर अनाज लिया और दरवाजे की ओर दौड़े। जब फल बेचने वाले ने कृष्ण को देखा,तो वह कृष्ण की सुंदरता से बहुत मोहित और चकित हो गया। उसने देखा कि कृष्ण की छोटी सी मुट्ठी से अनाज के दाने गिरे जा रहे है। जब कृष्ण उस तक पहुँचे तो उनके हाथ में केवल कुछ ही अनाज के दाने बचे थ। लेकिन फल वाला तो कृष्ण की सुंदरता से इतना आकर्षित था की उसने कृष्ण को अपनी टोकरी के सभी फल दे दिए और बदले में

कृष्ण के हाथ से थोड़े से अनाज के दानों को उसने ख़ुशी से स्वीकार कर लिया। कृष्ण प्रसन्न हुए और हाथों में सारे फल लेकर अपने घर की ओर चल दिए । अचानक एक चमत्कार हुआ। कृष्ण ने फल वाले की खाली टोकरी को कीमती सोने के गहनों और हीरे जवाहरात से भर दिया। वह फल बेचने वाला आश्चर्य चकित हो गया और समझ गया की ये सब भगवान कृष्ण की ही देन है।

यदि एक कृष्ण भक्त कृष्ण को प्रेम और भक्ति से कुछ भी देता है, तो बदले में कृष्ण उसे आशीर्वाद देते हैं।

कहानी : चुपके से आम खाना

एक बार चित्रकूट नामक पवित्र स्थान में एक गुरुकुल था जहाँ बहुत से लड़के पढ़ते थे। एक दिन गुरु जी ने लड़कों को पेड़ से एक आम तोड़कर लाने के लिए कहा। सभी लड़के बहुत उत्साहित हो गए और आम तोड़कर ले आए। तब गुरु जी ने उन्हें निर्देश दिया, “अब आप सभी को ऐसी जगह जाकर आम खाना होगा जहाँ कोई आपको देख न सके। अब आप सभी जाओ, अपना आम खाओ और फिर वापस आ जाओ। कृपया ध्यान रखें कि जब आप आम खा रहे हों तो कोई आपको न देखे।"

"ठीक है , गुरु जी," बच्चों ने खुशी से कहा और एक गुप्त स्थान खोजने के लिए भाग गए।

एक लड़का टेबल के नीचे छिप गया, जबकि दूसरा लड़का एक झाड़ी के नीचे छिप गया। कुछ लड़के खुले बक्सों में छिप गए। दो लड़कों को एक दीवार के पीछे एक उपयुक्त जगह मिली, जबकि दूसरे को कूड़ेदान के अंदर जगह मिली। इस प्रकार उन सभी ने गुप्त स्थानों पर अपना आम खाया और वापस गुरु जी के पास चले गए। सारे लड़के आम खाकर वापस आ चुके थे सिवाय एक के, यह लड़का आम को बिना खाए वापस ले आया । यह देख बाकी लड़के उसे चिढ़ाने लगे। कुछ लड़कों ने टिप्पणी की, "वाह !तुम्हे आम को छिपाने और खाने के लिए एक भी जगह नहीं मिली?" एक लड़के ने कहा, "बेचारा, शायद उसकी तबीयत ठीक नहीं है!"। दूसरे ने कहा, "शायद उसे आम पसंद नहीं हैं"। जब यह सब चल रहा था, तब गुरु जी ने उस लड़के को अपने पास बुलाया और पूछा, "क्या हुआ? आम क्यों नहीं खाया?” तब उस लड़के ने उत्तर दिया, “आदरणीय गुरुदेव! आपने हमें सिखाया हैं कि ईश्वर हर जगह है। वह हमारे हृदय में भी विराजमान है। इसलिए, मुझे ऐसा कोई स्थान नहीं मिला, जहाँ ईश्वर मुझे नहीं देख रहे हो। मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ कि आपके दिए हुए कार्य को मैं नहीं कर पाया ।"

लड़के का उत्तर सुनकर गुरु जी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होने लड़के को गले से लगा लिया और कहा, "मेरे प्यारे बच्चे, जो कुछ मैंने तुम्हें सिखाया है, तुम अच्छी तरह समझ गए हो। मुझे तुम पर गर्व है। हम सभी को हमेशा यह याद रखना चाहिए कि ईश्वर हमारे भीतर है और हर समय हमें देख रहे हैं। अगर हम इसे समझ सकते हैं, तो हमें जीवन में कभी भी गलत काम करने का मोह नहीं होगा।"

सभी छात्रों ने गुरु जी के पाठ को ध्यान पूर्वक सुना और ईश्वर के प्रति जागरूक जीवन जीने की प्रेरणा ली। उन्होंने उसका मजाक उड़ाने के लिए छात्र से माफी माँगी और उसकी समझ की प्रशंसा की।

कक्षा: I, II, III

कहानी : रहस्यमय बीज

एक बार एक महान राजा था। वह अपने राज्य पर निष्पक्षता और बुद्धिमानी से राज किया करता था। उसके देश के लोग बहुत खुश थे। लेकिन अब बुद्धिमान राजा बूढ़ा होता जा रहा था और उसे एक अच्छा और जिम्मेदार उत्तराधिकारी चुनने की चिंता सताने लगी।

तब राजा ने अपने राज्य के सभी युवकों को बुलाया। उसने प्रत्येक को एक - एक बीज दिया और उन्हें अगले वर्ष इन बीजों से उगाए गए स्वस्थ पौधों के साथ वापस लौटने के लिए कहा। कई युवक आए और बीज ले गए।

उनमें से एक छोटा लड़का था - माधव, जिसे बागवानी करने का बहुत शौक था। उसे यकीन था कि उसका पौधा कई खूबसूरत फूलों के साथ सबसे स्वस्थ होगा। उसने बीज बोया और दिन-रात पौधे की देखभाल की, लेकिन जब बीज एक पौधे के रूप में विकसित नहीं हुआ तब वह निराश हो गया।

एक वर्ष के बाद, सभी युवक अगले राजा बनने की आशा में महल के बाहर एकत्रित हो गए। सभी युवक अपने अपने पौधे लेकर आये। सारे पौधे बहुत स्वस्थ और सुन्दर फूलों वाले पौधे थे। इन सारे पौधों को देखकर माधव बहुत शर्मिंदा था क्योंकि उसके गमले में कोई पौधा नहीं था, फूलों की तो बात ही छोड़िए! । माधव के पास पहुँचने से पहले राजा ने सभी के पौधे देखें और उन पौधों की प्रशंसा की, माधव के पास पहुँचते ही राजा ने पूछा – "तुम्हारे पास पौधा क्यों नहीं है"। माधव ने दुखी मन से उत्तर दिया – "महाराज, मुझसे जितना हो सका मैंने देखभाल की, परन्तु पौधा नहीं उगा पाया।"

यह बात सुनकर राजा ने माधव को गले से लगा लिया और सभी लोग हैरान हो गए । तब राजा ने यह बताया कि सभी बीजों को पहले से ही उबाल लिया गया था, ताकि वे पूरी तरह से पौधों में विकसित न हो पाए , दरअसल राजा उबले हुए बीच देकर युवकों की ईमानदारी की परीक्षा ले रहे थे । राजा को प्रसन्न करने के लिए सभी युवक तरह तरह के फूलों वाले पौधे तो ले आए पर उसमें उनकी ईमानदारी नहीं थी । सिर्फ माधव ने हीं ईमानदारी दिखाई । उसकी ईमानदारी और कड़ी मेहनत से राजा प्रसन्न हुए और माधव को अगला राजा घोषित कर दिया।

कहानी : दसिया बाउरी का नारियल

पुरी में, भगवान जगन्नाथ, भगवान बलदेव और उनकी बहन सुभद्रा का एक सुंदर मंदिर है। कई साल पहले दसिया बाउरी नाम का एक साधारण आदमी वहाँ रहता था। गरीब होते हुए भी वह भगवान जगन्नाथ की पूजा करने के लिए प्रतिदिन मंदिर जाता था।

एक दिन जगन्नाथ मंदिर के रास्ते में दसिया बाउरी की मुलाकात एक नारियल बेचने वाले से हुई। उसके पास नारियल का एक बड़ा भारी थैला था। उसको इतना बड़ा भारी थैला ले जाने मे दिक्कत हो रही थी। दासिया ने दया दिखाते हुए उस आदमी की मदद की और थैले का एक सिरा उठा लिया। इस तरह वे उस बड़े थैले को पूरे बाजार में से ले गए। नारियल बेचने वाला दसिया बाउरी से बहुत खुश हुआ , वह उसे इनाम देना चाहता था। दसिया बाउरी ने कहा - "अगर आप मुझे कुछ देना चाहते हैं तो कृपया मुझे एक नारियल दें। मैं इसे भगवान जगन्नाथ को अर्पित करूँगा ।" तो नारियल बेचने वाले ने उसे मीठे पानी से भरा एक बड़ा हरा नारियल दिया।

वह मंदिर पहुँचा और सीधे पुजारी के पास गया और बोला । "आज मैं अपने भगवान जगन्नाथ के लिए एक नारियल लाया हूँ । क्या आप उन्हें यह नारियल चढ़ा सकते हैं?"

यह सुनकर उस अहंकारी पुजारी ने दसिया का मजाक उड़ाया। उन्होंने कहा, "भगवान जगन्नाथ केवल सर्वोत्तम सामग्री से बने सर्वोत्तम व्यंजन स्वीकार करते हैं। वे तुम्हारा नारियल क्यों स्वीकार करेंगे?"

यह सुनकर दसिया निराश हो गया। वह मंदिर के बाहर खड़ा हो गया और भगवान से विनती करने लगा - " हे भगवान जगन्नाथ, आप तो इस समस्त ब्रह्मांड के स्वामी हैं ।सब कुछ पहले से ही आपका है । मैं एक गरीब आदमी हूँ, मेरे पास आपको देने के लिए इस नारियल के सिवाय और कुछ नहीं है । यदि आप चाहें तो इस नारियल को स्वीकार करें ।

तभी एक चमत्कार हुआ! मंदिर के अंदर से दो लंबे नीले हाथ बाहर आए और उन हाथों ने नारियल को स्वीकार किया और दसिया बाउरी को आशीर्वाद दिया।दासिया की भक्ति से प्रसन्न होकर, भगवान जगन्नाथ ने स्वयं अपने हाथों से उनके प्यार भरे उपहार को स्वीकार किया।

कहानी : वृद्ध महिला और उसका आधा अनार

भगवान बुद्ध, विष्णु के दस अवतार में से एक हैं। एक समय राजगृह नामक स्थान पर भगवान बुद्ध कुछ दान एकत्रित कर रहे थे। एक वृक्ष के नीचे बैठे थे और जो भी धन और अन्य दान की चीज़ लेकर आता, वह उन्हें भगवान बुद्ध के समक्ष रख देता। तभी राजा बिम्बिसार वहाँ आए और जमीन, घर और मूल्यवान वस्तुएँ दान में दी। उसके बाद राजा अजातशत्रु वहाँ आए और उन्होंने भी मूल्यवान वस्तुएँ दान में दी। कई अन्य धनि व्यापारियों ने भी नगद व भोजन सामग्री दान में दी। भगवान बुद्ध ने सभी की दान की हुई वस्तुएँ अपने दाहिने हाथ से स्वीकार किया। तभी वहाँ एक वृद्ध महिला आई और

बोली - "भगवान मैंने सुना है कि आप दान के लिए धन और वस्तुएँ इकट्ठे कर रहे हैं परंतु मैं तो एक बहुत गरीब वृद्ध महिला हूँ और मेरे पास तो कुछ भी मूल्यवान वस्तु नहीं है दान में देने के लिए, सिवाय इस अनार के। और ये अनार भी मेरे पास पूरा नहीं है, बस आधा ही है। जब मैंने ये बात सुनी की धन और दान एकत्रित होने वाला है , तो उस समय में ये आधा अनार खा चुकी थी। इसलिए केवल मेरे पास आधा ही अनार है अब दान में देने के लिए। भगवान मैं इसे ही आपको अर्पित करती हूँ। कृपा करके आप इस आधे अनार को दान में स्वीकार कीजिए। भगवान बुद्ध स्वयं नीचे आए और अपने दोनों हाथों से उस अनार को स्वीकार किया। यह देखकर कि भगवान बुद्ध ने अपने दोनों हाथों से उस आधा अनार का दान स्वीकार किया है, राजा बिम्बिसार व राजा अजातशत्रु अत्यंत आश्चर्य चकित हो गए।

राजा बोले कि - "हे भगवान ! आपने यह दान अपने दोनों हाथों से लिया परंतु हमारे दिए दान आपने अपने एक हाथ से ही गृहण किया है। ये बात हमारी समझ में नहीं आयी।

भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया कि "हे राजन ! आपने जो भी दिया वह आपकी पूरी संपत्ति का एक अंश मात्र था परंतु इस निर्धन महिला ने अपने लिए कुछ भी न रखते हुए अपना सब कुछ दान में दिया है।

कक्षा: IV, V, VI

कहानी : भक्त ने श्रीमद् भागवत का पाठ कर भगवान शिव को आकर्षित किया।

एक समय की बात है, पूनतानम नाम के एक ब्राह्मण केरल मे रहते थे। वे भगवान श्री कृष्ण के बहुत बड़े भक्त थे। वे अपने तन मन से श्रीकृष्ण की भक्ति करते थे। सभी लोग, श्रीमद भागवत के उनके सुन्दर प्रवचन को बहुत पसंद करते थे। केरल में भगवान शिव का एक मंदिर था। यह मंदिर साल में सिर्फ कुछ ही दिनों के लिए खुलता था, बाकी पूरा साल वह मंदिर बंद रहता था। पूनतानम उस स्थान पर कुछ दिनों के लिए रहने आये । वहाँ पवित्र नदी में स्नान किया और उन्होंने परम दयालु भगवान शिव की पूजा की और बहुत खुश हुए । वे प्रतिदिन मंदिर में अपनी मधुर वाणी में वहाँ आये हुए भक्तों के सामने श्रीमद् भागवत का पाठ करने लगे । एक दिन श्रीमद् भागवत के दसवें स्कंध में वे श्री कृष्ण व उनकी रानी रुक्मणी के बीच के संवाद का वर्णन करने लगे। इस अध्याय में श्री कृष्ण अपनी पत्नी रुक्मिणी जी को चिढ़ाते हुए उनसे प्रश्न करते हैं कि क्यों उन्होंने बड़े बड़े राजा जैसे शिशुपाल, शाल्व, जरासंध आदि महारथियों को छोड़कर श्रीकृष्ण को वर के रूप में चुना? इसी वार्तालाप में रुक्मिणी जी उनको समझाते समझाते रो पड़ती हैं और बेहोश हो जाती हैं। श्री कृष्ण उन्हें शांत करते हैं। बस यहीं पर अध्याय समाप्त हो जाता है। पूनतानम ने पढ़ना समाप्त किया और पुस्तक में इस अध्याय के अंतिम पृष्ट पर एक मोरपंख रखकर पुस्तक बंद कर दी, ताकि अगले दिन वे आगे की कथा कह सके। अगले दिन जब कथा सुनाने के लिए श्रीमद भागवत कि पुस्तक को उन्होंने खोला तो देखा कि वह मोरपंख अध्याय के आखरी पृष्ट के बजाये

पहले पृष्ट में था। उनको आश्चर्य हुआ पर उन्होंने फिर से उसी अध्याय का शुरू से पाठ किया। इसी तरह हर दिन पाठ के अंत में वे मोरपंख को उसी अध्याय के अंतिम पृष्ट में रख कर जाते थे पर अगले दिन वह मोरपंख अध्याय के पहले पृष्ट में होता था। इसलिए कई दिनों तक वे वही अध्याय बार-बार पढ़ते रहे। कुछ दिनों बाद ,अब मंदिर बंद होने का समय आ गया। अंतिम दिन पर फिर से पूनतानम ने उसी अध्याय को पढ़ा और मंदिर के बाहर निकल कर अन्य भक्तों के साथ चल पड़े। अचानक थोड़ी दूर चलकर उनको याद आया कि वे अपने श्रीमद भागवत पुस्तक को मंदिर में ही भूल आये। वे जल्दी से नदी पार करके वापस मंदिर के द्वार पर गए जो मंदिर बंद हो चुका था। वे वहाँ अकेले थे, परंतु उनको किसी कि आवाज़ सुनाई दी । कोई मंदिर के अंदर से उसी अध्याय का पाठ कर रहे थे। भागवत का वही अध्याय सुनाई दे रहा था जिसका पाठ पूनतानम ने प्रतिदिन मंदिर में किया था। वे मंदिर कि ओर गए और उन्होंने दरवाजे की कोर में झाँका। उन्होंने देखा कि स्वयं भगवान शिव पूनतानम की श्रीमद भागवत पुस्तक से वह अध्याय पढ़ रहे हैं और माँ पार्वती और सभी भूतगण सुन रहे हैं। उनकी आँखों से अश्रु धारा बह निकली, वे चुपचाप वहाँ खड़े रहे और पूरा पाठ सुन रहे थे। अंत में भगवान शिव ने माँ पार्वती से कहा -"आपको मेरा श्रीमद भागवत का पठन कैसा लगा? माँ पार्वती बोलीं - "बहुत अच्छा था, परंतु पूनतानम के जैसा नहीं।" भगवान शिव बोले -" हाँ, यह तो सत्य कहा आपने । मुझे भी पूनतानम की वाणी में श्रीमद भागवत का यह अध्याय बहुत अच्छा लगता है। इसी कारण तो मैं प्रतिदिन मोरपंख को अध्याय कि शुरुआत पर रख दिया करता था। पूनतानम जो बाहर खड़े यह सब सुन रहे थे भावपूर्ण होकर जोर जोर से श्री कृष्ण का नाम जपने लगे और जब उन्होंने दोबारा अंदर झाँका तब तक शिव जी और पार्वती जी अंतर्ध्यान हो गए थे।

कहानी: राजा और उसकी चार पत्नियाँ

एक समय की बात है, एक राजा था उसकी चार पत्नियां थीं। वह अपनी चौथी पत्नी से सबसे अधिक प्रेम करता था और सर्व से सर्वश्रेष्ठ देने की चेष्टा करता था और देता भी था। राजा उसका काफी ख्याल भी रखता था और सुंदर वस्तुएँ उपहार देकर उसकी तारीफ करता था।

राजा अपनी तीसरी पत्नी से भी बहुत प्रेम करता था। राजा को उस पर बहुत गर्व था और हमेशा उसे अपने मित्रों से मिलाना चाहता था।

राजा को अपनी दूसरी पत्नी से भी प्रेम था। राजा की दूसरी पत्नी हमेशा से उसके साथ अच्छी और धैर्यशील भी थी और राजा का ध्यान भी रखती थी। राजा जब भी किसी समस्या में होता था, तब वह अपनी दूसरी पत्नी के पास जाता और उसकी पत्नी हमेशा राजा की उस बुरे वक्त से निकलने में मदद करती थी।

राजा की पहली पत्नी बहुत ही ईमानदार साथी थी। राजा के कामकाज, गृहस्ती और संपत्ति को संभालने में पहली पत्नी का बहुत योगदान था। यद्यपि राजा ने कभी अपनी पहली पत्नी को प्रेम और सम्मान नहीं दिया तथापि उसकी पहली पत्नी ने राजा से बहुत अधिक प्रेम किया। पर राजा ने कभी उसके सरल स्वभाव पर ध्यान नहीं दिया।

एक दिन राजा बीमार पड़ गया और उसे पता था कि जल्द ही उसकी मृत्यु होने वाली है। उसने अपनी आनंद पूर्ण और संपत्ति पूर्ण जीवन के बारे में सोचा और सोचा कि अभी मेरे साथ चार पत्नियां हैं पर जब मैं इस दुनिया में नहीं रहूँगा और मर जाऊँगा तब कितना अकेला हो जाऊँगा।

इस प्रकार उसने अपनी चौथी पत्नी से पूछा - "मैंने तुम्हें सबसे अधिक प्रेम किया, तुम्हें सुंदर वस्त्रों से संपन्न किया और तुम्हारा इतना ख्याल रखा, अब जब मैं प्राण त्यागने वाला हूँ , क्या तुम मेरा साथ दोगी? राजा की चौथी पत्नी ने जवाब दिया - "बिल्कुल नहीं" और बिना कुछ कहे वह वहाँ से चली गई। उसके जवाब से राजा के हृदय को एक छुरी की तरह सीधे चीर कर रख दिया।

उदास राजा ने फिर अपनी तीसरी पत्नी से पूछा - " मैंने तुम्हें अपनी पूरी जिंदगी बहुत प्रेम किया, अब जब मैं प्राण त्यागने वाला हूँ , क्या तुम मेरा साथ दोगी? राजा की तीसरी पत्नी ने जवाब दिया - "नहीं, यहाँ जीवन बहुत अच्छा है और तुम्हारे मरने के बाद मैं किसी और से विवाह करुँगी "। राजा का हृदय एकदम थम गया और ठंडा पड़ गया।

फिर राजा ने अपनी दूसरी पत्नी से पूछा - "मैंने हमेशा तुमसे मदद मांगी और तुमने हमेशा मदद की भी है अब मुझे फिर तुम्हारी मदद की आवश्यकता है - क्या तुम मेरा मरने के बाद भी साथ निभाओगे? उसकी दूसरी पत्नी ने जवाब दिया - "मुझे क्षमा करना इस बार मैं तुम्हारी मदद नहीं कर सकती, अगर मैं कुछ कर सकती हूँ तो केवल तुम्हें शमशान तक छोड़ कर आ सकती हूँ । जवाब से झटका खाकर राजा तहस-नहस हो गए। फिर एक आवाज आई मैं चलूँगी तुम्हारे साथ चाहे जहाँ तुम चले जाओ।

राजा ने देखा कि वह उसकी पहली पत्नी थी। राजा दुख पूर्वक बोला -" मुझे तुम्हारा ख्याल रखना चाहिए था जब मेरे पास वक्त था।"

असल में हम सब उसी राजा की तरह चार पत्नियों के साथ अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं!

क्या आप इसका अनुमान लगा सकते हैं?

हमारी चौथी पत्नी हमारा शरीर है हम हमारे शरीर पर चाहे जितनी मेहनत कर ले इसे अच्छा बनाने के लिए यह हमें अंतकाल में छोड़कर जाएगी। हमारी तीसरी पत्नी है हमारी संपत्ति। जब भी हम शरीर त्याग देंगे यह सब किसी और को चला जाएगा। हमारी दूसरी पत्नी है हमारे मित्र और हमारा परिवार जो हमारे पास तब तक ही है जब तक हम जीवित हैं। एक बार जब हम शमशान तक पहुँच जाते हैं तो वे हमसे काफी दूर हो जाते हैं और हमारी पहली पत्नी है वास्तव में हमारी आत्मा जिसे हम अक्सर धन और मोह के लोभ में हम नजरअंदाज कर देते हैं ।

कहानी: भगवान जिन्होंने खीर चुराई

श्री खीर चोर गोपीनाथ का प्रसिद्ध मंदिर उड़ीसा के रेमुना नामक एक छोटे से गाँव में स्थित है। यहाँ भगवान कृष्ण ने अपने प्रिय भक्त - श्री माधवेंद्र पुरी के लिए खीर चुराई थी।

श्री माधवेंद्र पुरी ने 500 वर्ष पूर्व वृंदावन में गोवर्धन पहाड़ी की चोटी पर श्री गोपाल जी के विग्रह की खोज की थी, जिनको अब श्रीनाथजी के नाम से जाना जाता है। एक बार गोपाल जी ने स्वप्न में माधवेंद्र पुरी को दर्शन दिए और उन्हें जगन्नाथ पुरी से चंदन का लेप और कपूर लाकर उनके शरीर पर लगाने को कहा।

भगवान के लिए चन्दन लाने के लिए माधवेंद्र पुरी ने अपनी पुरी की यात्रा शुरू की। बीच रास्ते में रेमुना गाँव आ पहुँचे । वहाँ के मंदिर में भगवान गोपीनाथ जी के दर्शन पाकर , उनका मन बहुत आनंदित हुए। फिर उन्होंने मंदिर के पुजारी से भगवान श्री गोपीनाथ जी को प्रतिदिन चढ़ने वाले भोग के बारे में पूछा । पुजारी ने उन्हें एक विशेष खीर के बारे में बताया, जो अमृत के समान स्वादिष्ट होती है, जो प्रतिदिन श्री गोपीनाथ जी को भोग लगती है। यह सुनकर माधवेन्द्र पूरी जी के मन में इच्छा हुई की इतनी स्वादिष्ट खीर का भोग वृन्दावन के गोपाल जी को भी लगना चाहिए। यह सोचकर उन्होंने उस विशेष खीर में प्रयोग की जाने वाली सामग्री के बारे में पुजारी जी से पूछकर जानकारी ली।

उस रात भगवान गोपीनाथ जी को अर्पित करने के लिए वह विशेष खीर लाई गई। उसी क्षण, माधवेंद्र पुरी ने सोचा कि - इस खीर को एक बार मै चख कर देखूँ ताकि वृंदावन में गोपाल जी के लिए भी ऐसी ही खीर तैयार हो सके। जैसे ही भोग की खीर को चखने का ख्याल उनके मन में आया , तुरंत माधवेन्द्र पूरी जी को अपने अपराध का एहसास हुआ कि उन्होंने भगवान जी को चढ़ाए जाने से पहले उस खीर का स्वाद लेना चाहा था। अपने स्वार्थपूर्ण विचार के लिए पश्चाताप करते हुए माधवेंद्र पुरी शर्मिंदा हुए। तुरंत वे मंदिर से निकलकर एक दूर स्थान पर चले गये और अपने अपराध का पश्चाताप करने के लिए, भगवान जी के पवित्र नामों का जाप करने लगे ।

"हरे कृष्णा हरे कृष्णा कृष्णा कृष्णा हरे हरे हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे"

इस महामंत्र का जाप करके हम भगवान कृष्ण को अत्यंत आनंद दे सकते हैं और साथ ही अत्यंत आनंद पा सकते हैं।

श्री कृष्ण परम पुरुषोत्तम भगवान् हैं। वे हर एक जीव जंतु की मनोदशा को जानते हैं ,खासकर उनके परम भक्तों की। उस रात, भगवान गोपीनाथ जी स्वयं मंदिर के पुजारी के सपने में प्रकट हुए और कहा कि - "माधवेन्द्र पूरी मेरे परम भक्त हैं और उनके लिए मैंने मंदिर के अंदर एक खीर का कटोरा रखा है। आप इसी समय मंदिर जाईये और वहाँ छुपाये हुये खीर के कटोरे को माधवेंद्र पुरी को दे दीजिये।" पुजारी जी नींद से तुरंत उठे और जो कुछ गोपीनाथ जी ने स्वप्न में कहा था उस से वे बहुत आश्चर्य चकित हुए। वे जल्दी से घर से मंदिर पहुँचे और सीधे गोपीनाथ जी के विग्रह के सामने गए। वहाँ एक खीर का एक कटोरा रखा हुआ मिला। पुजारी आश्चर्य चकित रह गए क्यूँकि मंदिर बंद करने से पहले हर रोज़ की

तरह उन्होंने सफाई की थी,तब उनको खीर का यह कटोरा नहीं दिखा था । ज़रूर भगवान गोपीनाथ जी ने वह खीर का कटोरा छुपा लिया था अपने प्रिय भक्त माधवेन्द्र पूरी के लिए !

पुजारी खीर लेकर माधवेंद्र पुरी की खोज में निकल गए। जब वे मिले तो पुजारी ने उनको अपने स्वप्न के बारे मै बताया और कैसे स्वयं श्री गोपीनाथ जी ने उनके लिए खीर चुराया और उनको देने के लिए कहा। यह सुनकर माधवेंद्र पुरी जी की आँखों से अश्रु बहने लगे। उनकी ख़ुशी का ठिकाना न रहा और खीर प्रसाद को गृहण करके भगवन गोपीनाथ का कोटि कोटि धन्यवाद किया।

भगवान कृष्ण को अपने सच्चे भक्त बहुत ही प्रिय होते हैं और उनको प्रसन्न करने के लिए वे खीर भी चुरा सकते हैं!

कक्षा : VII, VIII, IX

कहानी : भगवान जगन्नाथ का अवतार।

राजा इन्द्रद्युम्न भगवान विष्णु के महान भक्त थे और उनके सिर्फ एक दर्शन पाने के लिए व्याकुल थे। एक समय भगवान की इच्छा से भगवान का एक भक्त राजा इन्द्रद्युम्न के दरबार में आया और भगवान विष्णु के अवतार नीलमाधव के बारे में बताने लगा। नीलमाधव के बारे में सुनकर राजा इन्द्रद्युम्न उनके दर्शन और उनकी भक्ति की कामना करने लगे। राजा को उनके दर्शन पाने की इच्छा बढ़ती गई। भगवान नीलमाधव के बारे में पता लगाने के लिए उन्होंने कुछ ब्राह्मणों को हर एक दिशा में भेजा। विद्यापति नामक एक ब्राह्मण भगवान नीलमाधव की खोज करते करते, एक गाँव आ पहुँचा,जहाँ सबर जाति के लोग रहते थे। वहाँ उसने विश्ववसु नामक व्यक्ति के घर में शरण ली। उस समय उनके घर पर विश्ववसु नहीं थे परंतु उस समय उनकी पुत्री ललिता घर पर थी। कुछ समय पश्चात जब विश्ववसु घर लौटे तो उसने पुत्री को विद्यापति की आवभगत का आदेश दिया।

विद्यापति कुछ दिन तक वहीं रुका। सबर विश्ववसु ने विद्यापति से निवेदन किया कि वे उनकी पुत्री से विवाह कर ले। विद्यापति ने ललिता से विवाह कर लिया। विद्यापति ने देखा कि हर रात विश्ववसु कहीं चले जाते हैं और अगले दिन दोपहर लौट आते हैं। इसका कारण पूछने पर उनकी पत्नी ने उन्हें बताया कि वे एक गुप्त स्थान पर जाते हैं,जहाँ वे भगवान श्री नीलमाधव की पूजा प्रतिदिन करते हैं। विद्यापति बहुत प्रसन्न हो गए कि राजा इन्द्रद्युम्न के निर्देश के अनुसार, वे भगवान नीलमाधव की खोज करने में सफल हो गये। विद्यापति को भगवान नीलमाधव के दर्शन पाने की तीव्र इच्छा हुई। उसने अपनी पत्नी ललिता को अपनी इच्छा बतायी। फिर एक दिन पुत्री के निवेदन पर विश्ववसु ने विद्यापति की आँखों पर पट्टी बाँधी और उन्हें भगवान श्री नीलमाधव के दर्शन कराने ले गए। ललिता ने विद्यापति के वस्त्र के एक कोने वाले भाग में

कुछ राई के दाने बाँध दिए ताकि पूरे रास्ते में दाने गिरते रहे। जब वे भगवान नीलमाधव के पास पहुँचे तो उनकी अलौकिक सुंदरता देखकर विद्यापति मोहित हो गए। भरपूर आनंद में नाचने लगे।

विद्यापति तुरंत राजा इन्द्रद्युम्न के पास गए और उन्हें यह शुभ समाचार दिया। उन्होंने राई के दानों से ,जो अब छोटे छोटे पौधे बन गए थे, भगवान नीलमाधव तक जाने का मार्ग खोज लिया। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने देखा की भगवान नीलमाधव वहाँ नहीं थे। भगवान के दर्शन न होने के कारण राजा इन्द्रद्युम्न बहुत निराश हो गए। इतने दुखी हो गए थे कि, उन्होंने सोच लिया कि अब उनके जीवन का कोई अर्थ नहीं है और एक घास की शैया पर बैठ गए और भूखे रहकर अपना जीवन समाप्त करने का निश्चय कर लिया। उसी रात भगवान जगन्नाथ, राजा इन्द्रद्युम्न के सपने में आए और बोले - "हे राजन ! इतने निराश मत हो। मैं दरू यानी कि लकड़ी के रूप में सागर पर तैरता हुआ आऊँगा।" राजा को इस सपने द्वारा एक आशा कि किरण दिखाई दी कि जल्द ही वे भगवान जगन्नाथ जी के दर्शन कर पायेँगे। भगवान जगन्नाथ जी के कहे अनुसार राजा और उनकी प्रजा ने , सागर के किनारे भगवान जगन्नाथ जी के आगमन कि प्रतीक्षा की। उन्होंने देखा कि एक लकड़ी का बहुत बड़ा टुकड़ा महासागर में तैरता हुआ किनारे तक आ रहा था। उस पर शंख,चक्र,गदा,कमल के चिन्ह अंकित थे।

राजा अपने सभी सेवक हाथियों से उस भारी दरू (लकड़ी) को लाने का आदेश दिया। पर कोई भी उस भारी से दरु (लकड़ी) को ला नहीं पाया । उसी रात भगवान जगन्नाथ फिर राजा के सपने में आये और कहे - " मेरे सेवक विश्ववसु जो मेरी नीलमाधव के रूप में सेवा करता था उसे बुलाओ और एक स्वर्ण रथ दरु के समक्ष रखो।" इस तरह भगवान् जगन्नाथ जी कि कृपा से दरु को महल के अंदर लाया गया। अब राजा इन्द्रद्युम्न बेसब्री से जगन्नाथ जी के निज रूप के दर्शन पाना चाहते थे।

विश्वकर्मा जी एक बूढ़े ब्राह्मण के रूप में वहाँ आते हैं। दरू से भगवान जगन्नाथ का स्वरूप बनाने का कार्य विश्वकर्मा जी को सौंपा जाता ह। वे वचन लेते हैं कि अगर उन्हें 21 दिन बंद दरवाजे में रहने दिया जाए तो वे भगवान जगन्नाथ का स्वरूप बना देंगे। तुरंत ही सभी तैयारियाँ की जाती है और विश्वकर्मा जी उस दिन दरु को मंदिर के एक कमरे में ले जाकर दरवाजा बंद कर देते हैं और राजा से वचन लेते हैं कि कोई भी किसी भी अवस्था में 21 दिन से पहले कोई अंदर न आए और दरवाजा न खोलें। अगर ऐसा हुआ तो वे तुरंत वहाँ से काम अधूरा छोड़कर चले जायेंगे।

14 दिन बाद जब राजा कमरे के पास जाते हैं , तो उन्हें कोई भी आवाज नहीं सुनाई देती है। तो वे बहुत उतावले हो जाते हैं। उनके मंत्री उन्हें रोकते हैं, परंतु रानी के कहने पर वे कमरे का दरवाजा अपने हाथों से खोल देते हैं और वे देखते हैं कि अंदर कोई मूर्ति बानी नहीं है, बल्कि दरू के तीन हिस्सों के अलग अलग आकर हो चुके थे - एक भगवान जगन्नाथ का , दूसरा आकर उनकी बेहेन सुभद्रा माँ का और तीसरा उनके बड़े भैय्या बलराम जी का। निकट जाकर देखते हैं तो तीनों स्वरूपों के पैर ,उँगलियाँ, अंगूठे अधूरे थे। इतना देखते ही उन्हें अपराध बोध हो जाता है कि विश्वकर्मा जी की चेतावनी के बावजूद ,उनके कमरे में अंदर जाने कि वजह से भगवान का आकार पूरा हो नहीं पाया। वे दुखी होकर रो पड़ते हैं। प्रायश्चित करने के लिए वे अपना जीवन समाप्त करने का विचार करते हैं। तभी भगवान जगन्नाथ उनके स्वप्न में आते हैं

और कहते हैं कि-" मैं भगवान जगन्नाथ के रूप में यहाँ सदा रहूँगा और मेरे हाथ और पांव नहीं होने के बावजूद भी अपने भक्तों द्वारा (जो भी मुझ पर विश्वास रखते हैं) कि गयी सभी सेवाएँ स्वीकार कर लूँगा और विश्व कल्याण के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान तक विचरण करता रहूँगा ।

कहानी : ईश्वर जो करते हैं अच्छा करते हैं।

बहुत समय पहले दानवीर नामक एक शक्तिशाली और उदार राजा था। उनका एक बुद्धिमान व चतुर मंत्री था। वह मंत्री बहुत धैर्यवान और ईश्वर पर विश्वास रखने वाला था। राजा के दरबार में सभी प्रजा जन अपनी समस्याओं का समाधान पाते थे। वह राजा प्रतिदिन हजारों गाएँ भक्तों को दान देता और उनके चारे का भी प्रबंध करता। इन्हीं सब विशेषताओं के कारण सभी उन्हें दानवीर कहते थे। राजा दानवीर ने एक बार सोचा कि वह केवल अपने बल पर सब दान पुण्य कर रहा है। वह भूल गया था कि यह सब उसे ईश्वर की कृपा से मिला है। लेकिन मंत्री जानते थे कि राजा द्वारा जो भी दान पुण्य हो रहा है, वह सब ईश्वर की कृपा से ही हो रहा है। राजा तो केवल निमित्त मात्र है। वह राजा से अक्सर कहा करता था की जो भी होता है ईश्वर की इच्छा से होता है।

राजा और मंत्री हमेशा अच्छे मित्र की भांति रहते थे। एक बार राजा और मंत्री शिकार पर गए। वहाँ राजा घायल हो गए और उनके एक हाथ की उंगली कट गई। मंत्री ने तुरंत पट्टी बाँधी और बोला - "प्रिय राजा दानवीर, जो भी होता है ईश्वर की इच्छा से होता है और अच्छा ही होता है, इसलिए आप चिंता न करे। आपकी उंगली कटने के पीछे भी कुछ अच्छा कारण ही होगा"।

राजा तो पहले से ही पीड़ा में था इसलिए वह मंत्री के शब्द सुनकर अत्यधिक क्रोध से भर गया और मंत्री को एक थप्पड़ मार कर बोला - " चुप रहो! तुम बहुत निर्दयी हो"। क्रोध में उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि उस मंत्री को ले जाएँ और कारागृह में बंद कर दें।

फिर राजा दानवीर अकेले ही शिकार पर चला गया। आगे घने जंगल के मध्य में पहुँच गया। जंगल के बीच कुछ डाकू रहते थे। उस दिन अपनी कुलदेवी को किसी इंसान की बलि चढ़ाना चाहते थे। उन्होंने दानवीर को देखते ही उसे मोटी रस्सी से बांधकर पकड़ लिया और बलि के स्थान पर ले कर गए। जैसे ही डाकू तलवार से उसका वध करने लगे तो एक डाकू बोला - "यह तो अंग-भंग है"। हम अपनी देवी को इसकी बलि नहीं दे सकते - इसका शरीर पूर्ण नहीं है। इसकी एक उंगली कटी हुई है"। डाकुओं ने निराश होकर दानवीर को छोड़ दिया।

राजा तुरंत अपने राज्य पहुँचा। वो रास्ते में अपने चतुर मंत्री के बारे में सोचता रहा। व सीधे कारागृह की तरफ गया और उसने मंत्री को सजा से मुक्त किया। उसने मंत्री से क्षमा मांगी और डाकुओं का पूरा किस्सा सुनाया और कहा की अगर उनकी ऊँगली कटी न होती तो अब तक सारे डाकू , राजा की बलि चढ़ा दिए होते। राजा ने ईश्वर को धन्यवाद दिया की वह जीवित है। अब राजा ने भी मान लिया था की जो होता है अच्छे के लिए ही होता है। वह मंत्री के शब्द कभी नहीं भूल

सकता। राजा ने मंत्री से पूछा कि अगर सब कुछ ईश्वर की इच्छा से होता है तो ईश्वर ने मंत्री को कारागृह में क्यों डाला - उसमें क्या अच्छा हुआ? मंत्री बोले - " महाराज क्या आप नहीं समझ पा रहे कि आप तो कटी हुई उंगली की वजह से बच जाते परंतु यदि मैं आपके साथ होता तो आज बली मेरी चढ़ी होती।"

इतना सुनते ही दोनों ठहाके मारकर हंस पड़े और राजा का विश्वास ईश्वर में और गहरा हो गया।

कहानी: शिकारी बना भक्त

एक समय नारद मुनि ,पवित्र नदी गंगा-यमुना-सरस्वती के संगम के तट पर स्नान करने जंगल के रास्ते से जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने तीर लगने से घायल हुए हिरण को देखा। उसकी टांग टूटी हुई थी और वह बहुत अधिक पीड़ा में था। कुछ कदम आगे बढ़ते ही उन्होंने एक सूअर को देखा। वह भी अंग टूटने से अत्यधिक पीड़ा में था। और आगे जाने पर नारद जी ने एक खरगोश देखा। वह भी उसी तरह घायल था। सभी जानवरों को ज़मीन पर इतनी पीड़ा में देख कर नारद जी को बहुत आश्चर्य हुआ। वे आगे बढ़े तो एक शिकारी को पेड़ के पीछे छुपा हुआ देखते हैं। नारद जी अपना रास्ता छोड़कर उस शिकारी की तरफ जाते हैं - जो तीर कमान लिए पक्षियों और जानवरों के शिकार के लिए खड़ा था। नारदजी के पास आते ही सारे पक्षी उड़ जाते हैं। पक्षियों के उड़ते ही शिकारी क्रोध से भर जाता है। परंतु वह खुद को शांत करके नारद जी से पूछता है की क्यों वह अपना मार्ग छोड़कर उसकी तरफ आए? उन्हें देखकर सारे पक्षी उड़ गए जिनका वह शिकार करने वाला था।

नारद जी बोले - "मेरे मन में एक शंका है कि ज़मीन पर जो जानवर अध् मरे अवस्था में दिखे, क्या उन सब को तुमने घायल किया है"?

शिकारी बोला - "जी। मैंने ही उन जानवरों को इस अवस्था में डाला है"।

नारद जी ने पूछा -"परंतु तुमने उन्हें केवल घायल क्यों किया? उनको मार क्यों नहीं दिया"?

शिकारी बोला -"मेरा नाम 'मृगारी' है और मैं सभी जानवरों का शत्रु हूं। मुझे मेरे पिता ने इसी तरह शिकार करना सिखाया है। मुझे जानवरों को पीड़ा में देखकर अत्यधिक प्रसन्नता होती है"।

नारद जी बोले-"मैं तुमसे एक प्रश्न करता हूँ"। शिकारी ने सोचा कि यह साधु मुझसे कुछ माँगना चाहते हैं। वह बोला -"मैं आपको हिरण और शेर की खाल दे सकता हूँ अगर आप चाहे तो"। नारद जी बोले-" मुझे तुमसे यह सब नहीं चाहिए, लेकिन एक वचन दो कि तुम आज से किसी भी जानवर को पीड़ा में नहीं छोड़ोग। तुम उसको मार दोगे"।

शिकारी बोला -"परंतु जानवरों को पीड़ा में छोड़ने में क्या गलत है"? नारद जी बोले-" तुम इन जानवरों को अपनी प्रसन्नता के लिए इस अवस्था में छोड़ देते हो, भविष्य में तुम्हें भी इस पीड़ा का अनुभव करना होगा। जानवरों का शिकार करना ही

अपने आप में बहुत बड़ा पाप है। एक ऐसा समय आएगा जब यह सभी जानवर बारी-बारी से तुम्हारा शिकार करेंगे और तुम्हें इतनी ही पीड़ा मिलेगी"।

ये सब सुनकर शिकारी भयभीत हो गया क्योंकि उसे भी अपने पापों का ज्ञान था। वह नारद जी के सामने हाथ जोड़कर बोला -"मैंने तो बचपन से यही कार्य किया है परंतु अब मैं इन सब पापों से मुक्ति चाहता हूँ। आप ही मेरा मार्गदर्शन करें"।

नारद जी बोले -"मैं तुम्हें इस पाप भरे जीवन से मुक्ति दिला सकता हूँ । बस तुम मेरी आज्ञा का पालन करो।सबसे पहले अपना तीर कमान छोड़ दो"।

शिकारी बोला -"अगर तीर कमान नहीं होगा तो मैं जीवन कैसे जीऊँगा" ?

नारद जी बोले -"चिंता मत करो। जो भगवान कृष्ण सारी सृष्टि का संचालन करते हैं वही भगवान तुम्हें भी संभालेंगे"।

मृगारी ने निश्चिंत होकर अपना तीर कमान छोड़ दिया और नारद जी के चरणों में अपना मस्तक रख दिया। नारद जी बोले -"घर जाओ और अपना सबकुछ ब्राह्मणों को दान कर दो। केवल कुछ वस्त्र लेकर अपनी पत्नी के साथ नदी के किनारे एक कुटिया का निर्माण करो।

कुटिया के बाहर एक तुलसी का पौधा लगाओ। तुलसी को जल, पुष्प, धूप आदि अर्पित करो। दोनों के लिए भोजन की व्यवस्था हो जाएगी"।

मृगारी को आज्ञा देकर नारद जी ने उन तीनों अध् मरे पशुओं को जीवन दान भी दिया। मृगारी घर लौट आया और नारद जी की आज्ञा का पूरे मन से पालन करने लगा। शिकारी से साधु बनने की बात दूर दूर तक फैल गई। आस पास के गाँव के सभी लोग उसके दर्शन को आने लगे और साथ में भोजन इत्यादि भेंट स्वरूप लाते। इस तरह भोजन की व्यवस्था भी होने लगी। मृगारी और उसकी पत्नी अत्यधिक भोजन नहीं करते, केवल आवश्यकता अनुसार ही भोजन गृहण करते।

एक दिन नारद जी ने अपने मित्र पर्वत मुनि से मृगारी से मिलने का आग्रह किया जो उन्होंने मान लिया।

मृगारी ने जब उन दोनों को दूर से आते देखा तो दौड़कर उनके समीप गया। उसे चरण स्पर्श करने में संकोच हो रहा था क्योंकि उसके गुरु के चरणों के समीप कई छोटी छोटी चीटियां थीं और वे उन चीटियों को कष्ट नहीं देना चाहता था। इसलिए उसने एक साफ वस्त्र से उन चीटियों को सावधानी से हटाया और उसके पश्चात ही अपने गुरु नारद जी और पर्वत मुनि जी के चरण स्पर्श किया। नारद जी मृगारी के इस बदले स्वभाव को देखकर अत्यधिक प्रसन्न हुए। उन्होंने मन में विचार किया कि जिस मृगारी को जानवरों को अध् मरे अवस्था में पीड़ा देने से ही प्रसन्नता होती थी आज वह इन छोटी चीटियों को भी कष्ट नहीं देना चाहता था। उन्होंने प्रसन्न होकर मृगारी को आशीर्वाद दिया।

जब कोई मनुष्य भगवान की सच्चे मन से भक्ति करता है तो वह हिंसा का मार्ग छोड़कर अहिंसा का मार्ग अपना लेता है। मृगारी भी गुरु की आज्ञा का पालन करके और भगवान की भक्ति से एक निर्दयी शिकारी से एक सर्वश्रेष्ठ मानव बन गया।

कक्षा : X, XI, XII

कहानी: मधु और भगवान अलरनाथ

बहुत समय पहले केतन नाम का एक ब्राह्मण अपनी पत्नी व पुत्र के साथ रहता था। उसके पुत्र का नाम मधु था। भगवान् विष्णु के अनेक रूप हैं, उनमे से एक रूप है भगवान अलरनाथ। केतन भगवान अलरनाथ का परम भक्त था। व नित्य भगवान की पूजा करता, उनको भोग लगाता और फिर प्रसाद पाता। केतन की पत्नी बहुत ही स्वादिष्ट भोजन पकाती और जब वह भोजन पकाती तो पूरा घर उसकी खुशबू से भर जाता। केतन का पुत्र मधु भी बहुत आज्ञाकारी था।

एक बार केतन को भिक्षा के लिए कहीं बाहर जाना था। उसने अपने पुत्र मधु को बुलाया और कहा - " पुत्र मुझे कुछ दिनों के लिए बाहर जाना है, इसलिए तुम्हें आज से ही भगवान अलरनाथ को भोग लगाना है जैसे हम प्रतिदिन लगाते हैं और उसके बाद ही प्रसाद पाना है। अगले दिन जब मधु की माता ने भोजन तैयार किया तो मधु ने सावधानी पूर्वक भोजन की थाली को भगवान के समक्ष रखा और सभी व्यंजनों पर तुलसी के पत्ते भी रखे। प्रेम पूर्वक भगवान से भोजन गृहण करने का निवेदन करने लगा। वह बोला-"भगवान, मैं बालक हूँ और मुझे भोग लगाने की कोई भी विधि नहीं आती, परंतु आप भोग अवश्य स्वीकार करें"। यह कह कर वह बाहर जाकर अपने मित्रों के पास खेलने चला गया। कुछ समय पश्चात जब लौटकर आया तो देखता है कि भगवान के समक्ष भोजन वैसा का वैसा ही हैं। वह भगवान के पास जाकर बोला - "हे भगवान! आपने हमारा भोजन स्वीकार नहीं किया, मुझे क्षमा करें परंतु यदि आपने भोजन नहीं किया तो पिताजी मुझसे प्रसन्न नहीं होंगे। भगवान कृपा करके आप भोजन गृहण कीजिए।" यह कह कर वह फिर से बाहर चला गया। जब वह फिर से लौटा तो भरे बर्तनों को देख कर रोने लगा और बोला -"भगवान आपने अभी तक भोजन नहीं किया, मुझे पिताजी की तरह मंत्र इत्यादि नहीं आते परंतु मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप भोजन कर लीजिए" यह कह कर वह घर के बाहर बैठ कर रोने लगा! अपने आंसू पोंछ कर अंदर गया तो देखा कि सारे भोजन पात्र खाली हो गए हैं। वह बहुत प्रसन्न हुआ और मुस्कुराने लगा।

खाली पात्रों को देखकर उसकी माता को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने मधु से पूछा - "मधु, प्रसाद कहाँ गया"? वह बोला - "वह तो भगवान अलरनाथ ने खा लिया"। ऐसा तीन दिन तक होता रहा। माता भोजन पकाती, मधु भगवान को भोग लगाता और भगवान सारा भोजन गृहण कर लेते। जब तीसरे दिन केतन घर लौटा तो उसकी पत्नी ने उसे सब कुछ बताया की मधु

रोज़ प्रसाद के बिना सिर्फ खाली बर्तन वापस लाता है और पूछने पर कहता है की भगवान ने भोजन गृहण किया। केतना ने सोचा की अवश्य ही मधु सारा प्रसाद अपने मित्रों में बांट देता होगा। उसने सत्य का पता लगाने की ठानी।

अपने पुत्र से क्रोध भरी वाणी में पूछा - "मधु सत्य बताओ कि तुम सभी प्रसाद का क्या करते हो?"

मधु बोला - "पिताजी जैसे आपने भोग लगाने को कहा था मैं वैसे ही भोग लगाता हूं और भगवान अलरनाथ सब भोजन गृहण कर लेते हैं।" पिताजी बोले -"परंतु भगवान अलरनाथ भोजन नहीं खा सकते वे तो पत्थर के हैं।"

मधु बोला - "परंतु मैं सत्य कहता हूँ पिताजी यही भगवन सब कुछ खाते हैं।"

केतन ने सत्य का पता लगाने की सोच। वह देखना चाहता था कि मधु सत्य कह रहा है या नही। वह दीवार के पीछे छिपकर मधु को देखने लगा। प्रतिदिन की तरह मधु ने भगवान को भोग लगाया और भोजन गृहण करने का निवेदन करके बाहर चला गया। मधु के जाने के बाद केतन ने देखा की भगवान अलरनाथ ने अपने हाथ बढाए और मीठे चावल का एक कटोरा उठाने लगे। उसी समय केतन दीवार के पीछे से आया और भगवान की हाथ को पकड़ लिया। अचानक हाथ पकड़ने से गर्म चावल भगवान की ऊँगली पर गिर गया।

केतन ने कहा -" कोई पत्थर की मूर्ति भला कैसे कुछ खा सकता है? अगर आप सारा भोजन गृहण करेंगे तो हमारे लिए क्या बचेगा?

भगवान अलरनाथ मुस्कुराए और बोले -"केतन, तुम्हारा पुत्र सत्य कह रहा है वह मुझे भक्ति और भाव से भोग लगाता है। और मुझ में विश्वास रखता है। तुम मेरी पूजा तो प्रतिदिन करते हो परंतु मुझ पर विश्वास नहीं रखते। जो मुझ पर विश्वास नहीं रखते मैं उनका दिया कुछ भी गृहण नहीं करता। मैं मधु द्वारा अर्पित हुआ भोजन स्वीकार करता था क्योंकि उसे मुझ से प्रेम है और मुझ में विश्वास भी"। यह कहकर भगवान अंतर्ध्यान हो गए।

केतन बहुत अपराध बोध हुआ कि उसने अपने पुत्र पर विश्वास नहीं किया। केतन ने अपने पुत्र से क्षमा मांगी और गले लगाया।

भगवान अलरनाथ मंदिर ब्रम्हगिरी, उड़ीसा - पुरी में है। उनके हाथ की ऊँगली पर आज भी उस गरम मीठे चावलों के निशान दिखते हैं।

कहानी: भगवान जगन्नाथ का महाप्रसाद

नारद मुनि एक बार वैकुंठ गए और बहुत मन लगाकर माता लक्ष्मी की सेवा की। लक्ष्मी जी बहुत प्रसन्न हुई और उन्होंने नारद मुनि से कोई वरदान माँगने को कहा| नारद मुनि ने उत्तर दिया, " माताश्री कृपया आप यह वचन दे कि मैं जो कुछ

भी माँगूँगा, आप उसे देंगी ।" लक्ष्मी जी ने कहा की वे खुशी-खुशी उनकी इच्छा पूरी करेंगी। तब नारद मुनि ने माता लक्ष्मी से अनुरोध किया कि भगवान नारायण के महा-प्रसाद का बचा हुआ अंश माँ लक्ष्मी नारद मुनि को दिलवा दें ।

अचानक लक्ष्मी देवी के चेहरे का भाव बदल गया और वह चिंता में डूब गई और कहा "कृपया मुझसे भगवान के प्रसाद के अलावा कुछ और माँग लें," । "कुछ दिन पहले भगवान ने मुझे निर्देश दिया था कि मैं उनका प्रसाद किसी को न दूं| आप समझ रहे हैं ना कि मैं अपने प्रभु के आदेश की अवज्ञा नहीं कर सकती। पुत्र, मैं आपको प्रसाद नहीं दे सकती। "

लेकिन नारद जी ने भी हठ पकड़ ली कि -" माता, आप ने मुझे वचन दिया है" और कहा "आप भगवान नारायण की बहुत प्रिय हैं । कृपया मुझे भगवान का महा प्रसाद भीख में दे दीजिये। किसी न किसी तरह से आप मुझे भगवान का महा-प्रसाद दिलवा दीजिये |"

माता लक्ष्मी अब बहुत दुविधा में थीं कि अब वह क्या करें। उन्होंने नारद मुनि को प्रतीक्षा करने के लिए कहा और कहा कि वह देखेंगीं कि उसकी इच्छा को पूरा करने के लिए क्या किया जा सकता है। दोपहर के समय लक्ष्मी देवी ने भगवान नारायण को प्रेमपूर्वक भोजन करवाया । भले ही लक्ष्मी जी ने बहुत ही भलीभांति प्रेमपूर्वक अपने कर्तव्य का पालन किया, फिर भी भगवान नारायण का ध्यान गया कि आज लक्ष्मी जी बहुत दुखी लग रही है, उनका चेहरा उदास लग रहा है और वह किसी विषय को लेकर गहरी सोच में दिखाई दीं भगवान नारायण ने धीरे से उनसे इसका कारण पूछा । भगवान के चरण कमलों की शरण में लक्ष्मीजी ने अपनी दुविधा बताई । कृपालु भगवान नारायण ने लक्ष्मी जी को सांत्वना दी और कहा, "आज ही मैं इस प्रतिबंध को रद्द कर देता हूँ । आप मेरे महाप्रसाद के बचे हुए अंश की थाली नारद को दे सकती हैं। लेकिन इसको केवल एक ही तरीके से किया जा सकता है। आपको प्रसाद इस तरह ले जाना होगा कि मुझे दिखाई न दें। जब मैं अपना मुँह दूसरी तरफ़ कर लूँ, तो आप थाली को ले जा सकती है।”

लक्ष्मी जी खुश हो गईं। अपने प्रभु, भगवान् नारायण के निर्देश का पालन करते हुए, जब वे नहीं देख रहे थे, तब उन्होंने चतुराई से महाप्रसाद के बचे हुए अंश की थाली को वहाँ से ले लिया।

लक्ष्मीजी ने तुरंत महा-प्रसाद की थाली ली और खुशी-खुशी नारद मुनि को भेंट की। असीम आनंद और उत्सुकता से नारद मुनि ने भगवान के महा प्रसाद को आदर के साथ गृहण किया । उन्होंने भगवान नारायण के प्रसाद का अद्भुत आनंद लिया, और भगवान के पवित्र नाम का जाप करके परम आनंद में नृत्य करने लग गए । जैसे ही नारद जी ने महा प्रसाद को गृहण किया, वे अति भावविभोर हो गए और अपने आप पर नियंत्रण नहीं रख सके । अपनी वीणा लिये पूरे ब्रह्मांड में भ्रमण करने लगे और बिना रुके जप और नृत्य करते हुए, वे एक लोक से दूसरे लोक भ्रमण करने लगे । अंत में वे भगवान शिव के निवास कैलाश पर्वत पर पहुँच गए । नारद मुनि को ऐसी परमानंद की अवस्था में जप और नृत्य करते देख भगवान शिव आश्चर्यचकित रह गए। प्रभु के प्रसाद पाने की अत्यंत ख़ुशी में, नारद मुनि का भगवान शिवजी की ओर ध्यान ही नहीं गया । भगवान शिव ने नारद मुनि को शांत किया और कहा "नारद, मैं जानता हूँ कि भगवान् नारायण के

परम भक्त होने के कारण आप हमेशा ही परमानंद में रहते हैं। आप लगातार भगवान नारायण के नाम का जाप करते हैं, तो आपके आनंद कि कोई सीमा नहीं होती है । लेकिन मैंने आपको इस तरह आनंद और उल्लास में पूरी तरह खोये हुए कभी नहीं देखा! क्या इसका कोई विशेष कारण है ?"

तब नारद मुनि शांत हुए और उन्हें सब कुछ बताया। नारद ने अंत में कहा, "भगवान् का महाप्रसाद गृहण करने के बाद मुझे इतना परम आनंद मिला कि मैं नृत्य और जप में लीन हो गया ।"

यह सुनकर भगवान शिव ने हाथ जोड़कर उनसे कहा - "हे नारद! आप बहुत भाग्यशाली हैं कि आपने भगवान नारायण के महाप्रसाद को ग्रहण किया है।" भगवान शिव महाप्रसाद मिलने की आशा से मुस्कुराए और पूछा "प्रिय नारद, क्या आप मेरे लिए भी प्रसाद लाए हैं?"

नारद मुनि बहुत शर्मिंदा हुए कि वे भगवान शिव को देने के लिए कोई प्रसाद नहीं लाए थे। नारद अपना सिर नीचे करके भगवान शिव के सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गए, फिर उन्होंने देखा कि प्रसाद का एक कण उनके नख में चिपका रह गया था। नारद ने अपने को सँभालते हुए कहा "अरे हाँ! यहाँ कण मात्र महा प्रसाद रह गया है केवल आपके लिए।"

नारद मुनि ने ध्यान से भगवान शिव के निरीक्षण के लिए अपना हाथ बढ़ाया । "हे प्रभु (शिव जी)। आप बहुत भाग्यशाली हैं, कृपया यह महा-प्रसाद ले लीजिये ।" नारद मुनि ने शिवजी के मुंह में अपनी ऊँगली डाल दी। महाप्रसाद के उस छोटे से कण ने जैसे ही महादेव की जीभ को छुआ, उन्हें बहुत आनंद और उल्लास का अनुभव हुआ, इतना कि वे भी अब शांत नहीं रह सके । भगवान शिव जी ने भी जप और नृत्य करना शुरू कर दिया। जैसे-जैसे उनका परमानंद बढ़ता गया वैसे वैसे , उनका नृत्य भी बढ़ता गया। भगवान शिव जी ने अब तांडव नृत्य शुरू कर दिया, जो कि वे सृष्टि के विनाश होने से पहले करते हैं। सारा ब्रह्मांड हिलने लगा। हर कोई यह सोचकर डर गया, "क्या हुआ? यह तांडव नृत्य असमय क्यों हो रहा है? यह सृष्टि के विनाश का समय तो नहीं है।"

शिवाजी का तांडव नृत्य रोकने की हिम्मत किसी में नहीं थी। देवताओं ने माता पार्वती से भगवान को शांत करने की याचना की, अन्यथा पूरा ब्रह्मांड नष्ट हो जाएगा। माता पार्वती मौके पर पहुँची और भगवान शिव को तांडव नृत्य करते देखा। माता पार्वती नम्रतापूर्वक भगवान शिव के पास गईं, और उन्होंने पूछा, "हे प्रभु, यह क्या हो रहा है ? आप इस तरह से तांडव नृत्य क्यों कर रहे हो ? भगवान शिव ने समझाया कि उन्होंने नारद मुनि से भगवान नारायण का महा-प्रसाद प्राप्त किया था। पार्वती देवी आश्चर्य चकित हो गईं और कहा "हे मेरे प्रभु , क्या आपने मेरे लिए कोई महा-प्रसाद बचा कर रखा है?" भगवान शिव जी जवाब नहीं दे सके और मौन रह गए। वे नारद जी से महाप्रसाद का केवल एक कण प्राप्त करने में सफल रहे थे । वह कण तो बांटा ही नहीं जा सकता था |

महाप्रसाद न मिलने से पार्वती क्रोधित हुईं। "मैं भगवान नारायण के महाप्रसाद से वंचित रह गई हूं।" वह इतनी क्रोधित थी कि उनके क्रोध के आग ने पूरे ब्रह्मांड को जलाना शुरू कर दिया। एक लोक से दूसरे लोकों तक , सभी उनके क्रोध की ज्वाला में मानो जलने लगे । ऋषि-मुनियों ने समझा कि माता पार्वती के प्रचंड क्रोध से सब कुछ समाप्त होने वाला है। अब कोई उन्हें शांत नहीं कर सकता।

अंत में ब्रह्मा जी के नेतृत्व में सभी देवता भगवान विष्णु (नारायण) के पास वैकुंठ को गए । पूरी वस्तुस्थिति सुनकर, भगवान विष्णु ने गरुड़ की पीठ पर सवार होकर कैलाश की यात्रा की। जैसे ही पार्वती देवी ने भगवान नारायण को देखा, वह उन्हें प्रणाम करने के लिए आगे आई। भगवान नारायण ने उन्हें आशीर्वाद दिया और कहा, "आपको महाप्रसाद अवश्य मिलेगा, लेकिन आप कृपया शांत हो जाये और अपने क्रोध को शांत करें, वरना यह सृष्टि समाप्त हो जायेगी ।"

लेकिन माता पार्वती इससे सहमत नहीं हुई और कहा "यदि आप अपना महाप्रसाद केवल मुझे ही दें तो मुझे यह स्वीकार नहीं है |

मैं आपसे प्रार्थना करती हूं कि आप मेरे सभी जीवों को अपना महा-प्रसाद दें। मैं अपने किसी भी भक्त को इस तरह दुखी नहीं देख सकती, जैसे आपके महाप्रसाद से वंचित होने के कारण मैं अभी पीड़ित हूं। आप कुछ ऐसी व्यवस्था करें, जिससे सभी प्राणी आपके महाप्रसाद को पा सकें।

भगवान नारायण मुस्कुराए और कहा "तथास्तु" - जिसका अर्थ है "ऐसा ही हो" । उन्होंने कहा -" हे पार्वती ! आपकी इच्छा पूरी करने के लिए मैं नीलांचल (जगन्नाथ पुरी धाम) में प्रकट होने वाला हूँ । मेरा मंदिर , अपने महाप्रसाद के लिये प्रसिद्ध होगा। जो कोई मेरा महा प्रसाद लेगा वह मोक्ष को प्राप्त करेगा। मेरा सारा प्रसाद सबसे पहले तुम्हे अर्पण किया जाएगा - तब ही वह महाप्रसाद बनेगा। यह महाप्रसाद बिना किसी भेदभाव के सभी को वितरित किया जाएगा। तुम्हारा मन्दिर मेरे मंदिर के ठीक पीछे के आंगन में ही होगा। भगवान शिव का मन्दिर आंगन के बाहर होगा, क्योंकि उन्होंने आपको महाप्रसाद नहीं दिया है।"

भगवान जगन्नाथ के रूप में पुरी में प्रकट हुए। उनके साथ बलराम जी और उनकी बहिन सुभद्रा जी भी प्रकट हुए हैं। पार्वती देवी बिमला देवी के नाम से है। जगन्नाथ जी का प्रसाद सबसे पहले बिमला देवी को अर्पित किया जाता हैं। उसके बाद ही इसे महाप्रसाद के रूप में वितरित किया जाता है। पुरी में जगन्नाथ जी के महाप्रसाद लेने के लिए जातिगत कोई भेद नहीं है। जगन्नाथ महा-प्रसाद इतना शुद्ध है कि शास्त्रों के अनुसार कि एक ब्राह्मण, महाप्रसाद को कुत्ते के मुंह से भी ले सकता है। यह महाप्रसाद कभी भी दूषित नहीं होता है।

श्री जगन्नाथ महाप्रसाद कि जय हो।।।

कहानी: सुदामा द्वारका में श्री कृष्ण के दर्शन करते हैं

भगवान् श्री कृष्ण अपनी आध्यात्मिक दुनिया (अपने शाश्वत निवास) से इस सांसारिक दुनिया में प्रकट होते हैं, जैसा कि उन्होंने 5,000 साल पहले किया थ। सुदामा श्री कृष्ण के उन भक्तों में से थे, जो उनके बचपन के मित्र थे और गुरुकुल में उनके साथ पढ़ते थे। भगवान कृष्ण ने सोलह वर्ष की उम्र में वृंदावन से मथुरा आ गए थे और तत्पश्चात वे द्वारका के राजा के रूप में राज्य करने लगे। द्वारका में आने के बाद उनका विवाह श्री रुक्मिणी देवी और अन्य रानियों के साथ हुआ था।

सुदामा भी एक गृहस्थ थे, लेकिन वे साधरण जीवन जीते थे । एक निर्धन ब्राह्मण थे। सुदामा कभी भी आरामदायक जीवन यापन के लिए धन संचय करने में व्यस्त नहीं रहते थे। बिना किसी कठिनाई के उन्हें जो भी आय प्राप्त होती थी , वे उसे स्वीकार करके अपना जीवन व्यतीत करते थे । वे अपना समय परम पुरुषोत्तम भगवान की सेवा और भक्ति में लगाते थे, उनके इसी व्यवहार और स्वभाव से उनके ज्ञान की परिपूर्णता दिखाई देती थी। बाहरी रूप से सुदामा बहुत गरीब दिखाई देते थे क्योंकि उनके और उनकी पत्नी के पास ना ही कोई ऐश और आराम की वस्तु थी और ना ही कोई राजसी वस्त्र थे, वे अपनी पत्नी को कोई राजसी उपहार भी नहीं दे सकते थे । वास्तव में वे पर्याप्त भोजन भी अर्जित नहीं कर पाते थे , और वे दोनों बहुत दुबले-पतले दिखाई देते थे।

अक्सर सुदामा की पत्नी उनसे कहती थी, " हे नाथ, मैं जानती हूँ ,कि समस्त ब्रह्मांड में सर्वोपरि भगवान श्री कृष्ण आपके परम मित्र हैं। और आप भी उनके परम भक्त हैं , और वे अपने भक्त की सहायता के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। आप जैसे भक्तो के पास भगवान कृष्ण के अलावा और कोई आश्रय नहीं है। इसलिए, कृपया आप द्वारका में उनके पास एक बार जायें। मुझे विश्वास है कि वे आपकी दुर्दशा को समझेंगे।

एक बार जब उनकी पत्नी ने यह अनुरोध किया तो सुदामा ने सोचा, "हालाँकि, मुझे भगवान कृष्ण से कोई भौतिक लाभ माँगने की इच्छा नहीं है लेकिन, अगर मैं वहाँ जाऊँगा, तो मैं व्यक्तिगत रूप से भगवान को देख सकूँगा। यह एक महान अवसर होगा, भले ही मैं उनसे कोई भौतिक लाभ न माँगूँ।" इसलिए उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि वे जायेंगे और वह तुरंत कुछ ऐसा कुछ तैयार करे जिसे वे अपने मित्र को भेंट के रूप में दे सके।

सुदामा की पत्नी के पास घर में कुछ भी नहीं था, लेकिन उसने बाहर जाकर अपने पड़ोसियों से कुछ तंदुल चावल, जो कि निम्न स्तर का चावल है, एकत्र किया और उसे रूमाल में बाँध दिया। सुदामा तुरंत द्वारका की ओर चल पड़े। भगवान् के एक भक्त होने के कारण, वे हमेशा भगवान कृष्ण के बारे में सोच रहे थे, और अब वह इस विचार से आनंदित हो गये कि वे जल्द ही भगवान के दर्शन कर पायेंगे ।

द्वारका महल जहाँ भगवान कृष्ण रहते थे, वहाँ पहुँचना सब के लिए सुलभ नहीं था, क्योंकि यह एक राजा का महल था और चारों ओर पहरा था। लेकिन संतों को प्रवेश करने की अनुमति दी गई थी, और सुदामा तीन सैन्य शिविरों और कई द्वारों से गुजरते हुए अंततः भगवान कृष्ण के आवासीय स्थान में प्रवेश कर गए।

उस समय भगवान कृष्ण अपनी रानी देवी रुक्मिणी के साथ बैठे थे, लेकिन जब उन्होंने अपने मित्र सुदामा को आते देखा, तो भगवान हर्षित होकर उठे और उनका स्वागत करने के लिए आतुरता से आगे बढ़े, और उन्होंने सुदामा को स्नेह से गले लगा लिया।

यह देख वहाँ मौजूद सभी लोग हैरान रह गए। सब सोचने लगे - "यह निर्धन ब्राह्मण कौन है? वह साफ सुथरा भी नहीं है, और वह इतना पतला है, फिर भी भगवान कृष्ण ने उसे अपने गले से लगा लिया ह। "

भगवान कृष्ण ने अपने गुरुकुल के मित्र सुदामा का कई तरह से स्वागत किय। उन्होंने कहा, "मेरे प्रिय मित्र, यह मेरा सौभाग्य है कि आप यहाँ आए हैं।" यह कहकर भगवन श्री कृष्णा ने सुदामा ब्राम्हण के चरण धोये। उनके लिए उत्तम खान पान कि दावत का आयोजन किया।

सुदामा को अपने गद्देदार बिस्तर पर बिठाकर, भगवान कृष्ण ने सुदामा के साथ , गुरुकुल में बिताये दिनों को याद किया। ।

भगवान कृष्ण ने कहा, "मेरे प्रिय मित्र,क्या तुम्हे हमारी उन दिनों की याद आती है ? तुम्हे याद होगा कि एक बार हम गुरु जी की पत्नी के आदेश पर जंगल से ईंधन के लिए लकड़ियाँ लेने गए थे। जब हम सूखी लकड़ी इकट्ठा कर रहे थे, हमे समय का पता नहीं चला और उस घने जंगल के अंदर अंदर चले गए और वापसी का रास्ता खो गए। तब अचानक से वहाँ धूल भरी आँधी आई, आकाश में बादल चा गए और बिजली की गड़गड़ाहट शुरू हो गई । फिर सूर्यास्त हुआ, और हम अंधेरे जंगल में खो गए।"

"इसके बाद, तेज बारिश हुई; सारा मैदान पानी से भर गया था, और हम अपने गुरु जी के घर लौटने का रास्ता नहीं खोज पाए। तुम्हे शायद याद होगा कि उस रात कि बड़ी मूसलाधार वर्षा थी। धूल भरी आंधी और भारी बारिश के कारण हमें एक पेड़ पर चढ़कर रात काटनी पड़ी । उस विकट स्थिति में, हमने एक-दूसरे का हाथ थाम लिया। इसी तरह से हमने पूरी रात गुजारी, और सुबह-सुबह जब हमारे गुरु जी

को हमारी अनुपस्थिति का पता चला, तो उन्होंने अपने अन्य शिष्यों को हमें खोजने के लिए भेजा। वे भी उनके साथ आये, और जब वे जंगल में हमारे पास पहुँचे, तो उन्होंने हमें बहुत व्यथित पाया।

"बड़ी स्नेह के साथ हमारे गुरु जी ने कहा, 'मेरे प्यारे शिष्यों, यह बहुत प्रशंसनीय है कि मेरी बात का सम्मान करने के लिए आप दोनों ने इतनी परेशानी का सामना किया और अपने गुरु के दिए कार्य को पूरा किया"। वे अपने दोनों शिष्यों से बहुत प्रसन्न हुए और उन्हें पूरे दिल से आशीर्वाद दिया।

भगवान कृष्ण ने अपने मित्र सुदामा से बहुत देर तक बातें की। फिर वे मुस्कुराने लगे और पूछा, "मेरे प्रिय मित्र, तुम मेरे लिए क्या भेंट लाए हो? क्या तुम्हारी पत्नी ने तुम्हें कुछ अच्छे पकवान् बनाकर दिए हैं?”

सुदामा ने तंदुल चावल कि पोटली को भगवान कृष्ण को देने मे संकोच किया। "मैं इतनी तुच्छ चीज़ कैसे अपने प्रभु को दे सकता हूँ?" सुदामा ने सोचा। परन्तु प्रभु सुदामा के हृदय को भली-भांति जानते थे , क्योंकि वे सबके हृदय में स्थित हैं।

उस पोटली को कृष्ण ने मित्र के हाथ से ले लिया और कहा -"मेरे प्रिय मित्र," भगवान कृष्ण उत्साह से आगे बढ़े, "आप मेरे लिए इतने अच्छे स्वादिष्ट तंदुल चावल लाए हैं। यह न केवल मुझे बल्कि पूरी सृष्टि को प्रसन्न करेगा।"

इस कथन से हमें यह समझाया जाता है कि भगवान कृष्ण, पूरी सृष्टि के मूल हैं।जिस प्रकार किसी वृक्ष की जड़ को सींचने से वृक्ष के प्रत्येक भाग में तुरंत जल वितरित हो जाता है, उसी प्रकार भगवान कृष्ण को प्रसन्न करना ही सर्वोच्च कल्याणकारी कार्य माना जाता है।

भगवान कृष्ण ने चावल का एक निवाला खा लिया, लेकिन जब उन्होंने दूसरा निवाला खाने का प्रयास किया, तो देवी रुक्मिणी ने उनका हाथ पकड़कर कहा "हे प्रभु” ,"आपके इस एक निवाले को लेने से सुदामा न केवल इस जन्म में बल्कि अगले जन्म में भी धनवान बनेंगे। आप इतने दयालु हैं कि चावल का यह एक निवाला उसके लिए पर्याप्त है।

सुदामा ने भगवान कृष्ण से कुछ नहीं माँगा पर भगवान् कृष्ण जानते थे कि सुदामा कुछ भौतिक ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए या अपनी पत्नी के कहने पर उनसे मिलने नहीं आया था। इसके अलावा, वे अच्छी तरह से जानते थे कि सुदामा का उनके प्रति प्रेम भौतिक लाभ की किसी भी इच्छा से दूषित नहीं था। ; पूरे समय सुदामा दिव्य आनंद के सागर में विलीन थे। उस रात महल में आराम करने के बाद, अगली सुबह सुदामा अपने घर के लिए चल दिये । सुदामा पूरा रास्ता अपने प्रभु के साथ बिताए हुए समय को याद करते हुए और असीमित आनंद का अनुभव कर रहे थे।

कृष्ण के बारे में सोचते - सोचते ही सुदामा अपने घर पहुँच गए । लेकिन जब उन्होंने अपनी झोपड़ी की तलाश की तो उसके स्थान पर एक विशाल, भव्य महल देखा जो कीमती हीरे जवाहरातों से बना था और सूरज की तरह चमक रहा था।

"यह क्या है?" बहुत आश्चर्य होकर उन्होंने सोचा। "मैं इन परिवर्तनों को कैसे देख रहा हूँ? यह महल मेरा है या किसी और का? निश्चित रूप से यह वह जगह है जहाँ मैं रहता था - यह वही जगह है - लेकिन यह कितना आश्चर्यजनक रूप से बदल गया है!" तब सुदामा ब्राह्मण को एक के बाद एक चकाचौंध भरी ऐश्वर्य और सुंदरता का पता चला। अपने पति के वापस आने की खबर सुनकर, ब्राह्मण की पत्नी बधाई ख़ुशी से महल से बाहर भागी। वह इतनी सुंदर दिखाई दी कि ऐसा लग रहा था कि मानो भाग्य की देवी स्वयं उनसे मिलने आई हैं। ब्राह्मण अपनी पत्नी को इतना सुंदर और इतना स्नेही देखकर आश्चर्यचकित हुआ, और बिना एक शब्द कहे पत्नी के साथ महल में प्रवेश कर गया। उसकी भीतरी कोठरी स्वर्ग के राजा

के निवास के समान थी। महल गहनों के कई स्तंभों से घिरा हुआ था, मखमल और रेशम की समृद्ध छतरियां विभिन्न स्थानों पर लटकी हुई थीं, और सब कुछ भव्य था।

सुदामा समझ सकते थे कि भगवान ने मुट्ठी भर चावल की तुच्छ भेंट को , जो उनके भक्त द्वारा स्नेह में चढ़ाया गया था, एक भव्य भेंट के रूप में स्वीकार किया । और बदले में स्वर्ग के ऐश्वर्यों से भी अधिक अद्‌भुत धन दिया, जो कि देवताओं के पास भी नहीं था। सुदामा ने उन पर अकारण दया करने के लिए भगवान कृष्ण को कोटि कोटि धन्यवाद दिया।